दिल्ली उच्च न्यायालय: नई दिल्ली

सुरक्षित: 16 अप्रैल, 2024
उद्घोषित: 3 जुलाई, 2024

रि.या.(सि.) 6926/2007

सीमेंट कार्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड ..... याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री रवि सीकरी, वरिष्ठ अधिवक्ता सह
श्री प्रकाश गौतम, श्री दीपांक यादव, सुश्री कनक ग्रोवर और श्री नचिकेत चावला, अधिवक्तागण

बनाम

प्रकाश वीर तोमर और अन्य ..... प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री संजय, प्र.-1 के अधिवक्ता

रि.या. (सि.) 6954/2007

सीमेंट कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड ..... याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री रवि सीकरी, वरिष्ठ अधिवक्ता सह
श्री प्रकाश गौतम, श्री दीपांक यादव, सुश्री कनक ग्रोवर और श्री नचिकेत चावला, अधिवक्तागण

बनाम

बी.के. शुक्ला और अन्य ..... प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री संजय, प्र.-1 के अधिवक्ता

कोरम:
माननीय न्यायमूर्ति श्री चंद्र धारी सिंह

निर्णय

न्या. चंद्र धारी सिंह

1. याचिकाकर्ता की ओर से भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के सहपठित अनुच्छेद 227 के अंतर्गत रिट याचिकाओं का वर्तमान समूह दायर किया गया है, जिसमें प्रत्यर्थी कर्मकारों के नियमितीकरण के दावे पर न्यायनिर्णयन करते हुए केंद्र सरकार के श्रम न्यायालय सह औद्योगिक अधिकरण द्वारा पारित आक्षेपित अधिनिर्णयों को अभिखंडित करने की मांग की गई है। विद्वान अधिकरण ने आई.डी. 56/2003 में 18 अक्टूबर 2006 को दिए गए औद्योगिक अधिनिर्णय, जिसे रिट याचिका संख्या रि.या.(सि) 6926/2007 के माध्यम से चुनौती दी गई थी, में याचिकाकर्ता को छंटनी प्रतिकर के रूप में चार साल का वेतन देने का निर्देश दिया था और औद्यो.वि. 52/2003 में 1 दिसंबर 2006 को दिए गए औद्योगिक अधिनिर्णय, जिसे रिट याचिका संख्या रि.या.(सि) 6954/2007 के

माध्यम से चुनौती दी गई थी, में 25% बकाया वेतन के साथ कर्मचारियों को बहाल करने का निर्देश दिया था और छंटनी प्रतिकार के रूप में चार साल के वेतन के साथ कर्मचारियों की छंटनी करने की स्वतंत्रता दी थी।

2. याचिकाओं के इस समूह में अधिनिर्णय के लिए जो सामान्य मुद्दा आता है, वह यह है कि क्या विद्वान अधिकरण निर्देश-निबंधन, जो प्रत्यर्थी कर्मकारों के नियमितीकरण से संबंधित हैं, से आगे बढ़ सकता है और कर्मकारों की छंटनी से संबंधित मुद्दों पर न्यायनिर्णयन दे सकता है।

3. चूंकि, याचिकाओं के वर्तमान समूह में शामिल तथ्य और कानूनी मुद्दे समान हैं, इसलिए, इस न्यायालय ने याचिकाओं के वर्तमान समूह के निपटान के लिए 'सीमेंट कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड बनाम प्रकाश वीर तोमर एवं अन्य' शीर्षक वाली रिट याचिका संख्या रि.या. (सि.) 6926/2007 से तथ्यों और प्रस्तुतियों को चुना है।

<u>तथ्यात्मक मैट्रिक्स</u>

4. तत्काल रिट याचिका के न्यायनिर्णयन के लिए आवश्यक प्रासंगिक तथ्यों को नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है:

क.) याचिकाकर्ता/सीमेंट कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड एक सरकारी स्वामित्व वाली कंपनी है जो सीमेंट के निर्माण और उत्पादन में लगी हुई है।

प्रत्यर्थीगण वे कर्मकार हैं जिन्होंने याचिकाकर्ता की दिल्ली सीमेंट ग्राइंडिंग (इसके बाद "डीजीयू") यूनिट में तदर्थ आधार पर काम किया था।

ख.) याचिकाकर्ता को इसकी बिगड़ती वित्तीय स्थिति के कारण 8 अगस्त 1996 को औद्योगिक और वित्तीय पुनर्निर्माण बोर्ड (इसके बाद "बीआईएफआर") द्वारा रुग्ण औद्योगिक कंपनियां (विशेष प्रावधान) अधिनियम, 1985 (इसके बाद "एसआईसीए") की धारा 16 के तहत "रुग्ण" यूनिट घोषित किया गया था और यह 9 फरवरी, 1999 से बंद हो गई थी।

ग.) 12 जून 1998 को, बीआईएफआर ने याचिकाकर्ता की सभी रुग्ण इकाइयों में आगे रोजगार पर प्रतिबंध लगा दिया।

घ.) प्रत्यर्थीगण ने नियमितीकरण की मांग करते हुए रिट याचिका रि.या.(सि.) संख्या 5026/1999 दायर करके इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया, जिसमें इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने 18 दिसंबर 2001 के आदेश के माध्यम से याचिका को असंधार्य मानते हुए खारिज कर दिया और प्रत्यर्थीगण को औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (इसके बाद “अधिनियम”) के तहत उपाय तलाशने का निर्देश दिया।

ङ.) तदनुसार, प्रत्यर्थीगण ने उपयुक्त सरकार से संपर्क किया और पक्षकारगण को सुलह के लिए भेजा गया। सुलह कार्यवाही की विफलता पर, उपयुक्त सरकार ने 1 अप्रैल 2003 के अपने संदर्भ आदेश के माध्यम से विवाद को न्यायनिर्णयन के लिए केंद्रीय सरकार औद्योगिक अधिकरण सह श्रम न्यायालय, नई दिल्ली को भेज दिया। विशिष्ट निर्देश-निबंधन इस प्रकार था:

"क्या जुलाई 1991 से सीमेंट कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, नई दिल्ली की दिल्ली सीमेंट ग्राइंडिंग यूनिट में काम करने वाले

भूतपूर्व अस्थायी क्लर्कों, अर्थात् श्री प्रकाश वीर तोमर, राज सिंह चपराना, राज कुमार तोमर, ताज कुमार, एकनाथ सिंह, एस.एन. पाठक और राजिंदर कुमार की सेवाओं के नियमितीकरण के संबंध में सीसीआई/डीजीयू वर्कर्स यूनियन की मांग न्यायसंगत, निष्पक्ष और वैध है? यदि हाँ, तो कर्मकार किस राहत के हकदार हैं और किस तारीख से?"

च.) औद्योगिक विवाद के लंबित रहने के दौरान, 6 सितम्बर, 2003 को प्रत्यर्थीगण ने याचिकाकर्ता के समक्ष एक ज्ञापन प्रस्तुत किया जिसमें याचिकाकर्ता के साथ उनके संबंध समाप्त करने की मांग की गई और नियमित कर्मचारियों के समान स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना के अंतर्गत मुआवजे का अनुरोध किया गया था।

छ.) विद्वान अधिकरण ने 18 अक्टूबर, 2006 के अपने आक्षेपित अधिनिर्णय के माध्यम से यह माना कि प्रत्यर्थीगण को यूनिट बंद होने के कारण नियमित नहीं किया जा सकता है तथा याचिकाकर्ता के पास कोई काम नहीं बचा है, तथापि, इस तथ्य कि प्रत्यर्थीगण इसमें लंबे समय से कार्यरत थे, के कारण प्रत्यर्थीगण छंटनी प्रतिकर के रूप में चार साल का वेतन पाने के हकदार हैं।

ज.) आक्षेपित अधिनिर्णय से व्यथित होकर विद्वान अधिकरण ने तत्काल याचिका दायर की।

<u>इस न्यायालय के समक्ष अभिवचन</u>

5. याचिकाकर्ता ने निम्नलिखित आधारों पर आक्षेपित अधिनिर्णय को चुनौती दी है:

"आधार

(i) क्योंकि आक्षेपित अधिनिर्णय अधिकरण के क्षेत्राधिकार के अधिकारातीत है और इस प्रकार वह अपास्त किए जाने योग्य है।
(ii) क्योंकि औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के तहत स्थापित अधिकरण, संविधि का एक अंग है और वह अपने मूल संविधि द्वारा प्रदत्त क्षेत्राधिकार से बाहर जाकर कार्य नहीं कर सकता है।
(iii) क्योंकि औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10 के तहत अधिकरण को अपने अधिनिर्णय को उसके समक्ष निर्दिष्ट मुद्दों तक ही सीमित रखना होता है तथा वह ऐसे विवाद पर निर्णय नहीं दे सकता जो संदर्भ से पूरी तरह से अलग हो। इस मामले में, विद्वान अधिकरण ने एक ऐसा अधिनिर्णय पारित किया है जिसका उसके समक्ष संदर्भित विवाद अर्थात प्रत्यर्थीगण के नियमितीकरण से कोई संबंध नहीं है।
(iv) क्योंकि निर्देश निबंधन के अवलोकन मात्र से पता चलता है कि विद्वान अधिकरण को भेजा गया विवाद दावेदारों की सेवाओं के अवशोषण/नियमितीकरण के संबंध में था, जो याचिकाकर्ता प्रबंधन के स्वामित्व वाली फैक्ट्री डीजीयू में अस्थायी कर्मचारी के रूप में काम कर रहे थे। प्रत्यर्थी की सेवाओं की समाप्ति के लिए जिन शर्तों को पूरा करने की आवश्यकता है, उनके बारे में कोई संदर्भ नहीं दिया गया था।
(v) क्योंकि विद्वान अधिकरण ने माननीय उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा सेक्रेटरी ऑफ स्टेट बनाम उमा देवी (III) [2006 एसएससी (एल एंड एस) 753] में निर्धारित कानून के मद्देनजर यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रत्यर्थी कर्मकारों के नियमितीकरण का सवाल ही नहीं उठता, लेकिन जब उसने यह पूर्व शर्त रखी कि प्रत्यर्थीगण को छंटनी के समय 2005 की आनुपातिक मजदूरी की

दर से गणना की गई चार वर्ष की मजदूरी के बराबर छंटनी प्रतिकर दिया जाना चाहिए, तो उसने स्पष्ट रूप से गलती की और अपने क्षेत्राधिकार का अतिक्रमण किया।

(vi) क्योंकि अन्यथा भी, किसी अधिकरण को ऐसी कोई शर्त निर्धारित करने का क्षेत्राधिकार नहीं हो सकता है। कर्मकारों की छंटनी के लिए पूर्व शर्तें औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25-एफ में दी गई हैं। कर्मकारों का अधिकार और छंटनी प्रतिकर के लिए प्रबंधन का सहसंबद्ध दायित्व एक महीने की नोटिस अवधि या उसके बदले में वेतन और इसके अतिरिक्त सेवा के प्रत्येक पूर्ण वर्ष के लिए 15 दिनों के वेतन के बराबर राशि तक सीमित है। प्रत्यर्थीगण के स्वयं के बयान के अनुसार, वे वर्ष 1990-1996 के बीच याचिकाकर्ता प्रबंधन में शामिल हुए थे। इस प्रकार उनके सर्वोत्तम मामले के अनुसार भी, यदि छंटनी इस स्तर पर होती है तो वे मुआवजे के रूप में छंटनी के समय 6 से 8 महीने के वेतन के बराबर छंटनी प्रतिकर के हकदार होंगे। अंतिम प्राप्त वेतन की दर से चार वर्ष के वेतन के बराबर छंटनी प्रतिकर पाने के लिए, प्रत्येक दावेदार को 96 वर्ष (छियानवे वर्ष) तक काम करना आवश्यक है।

(vii) क्योंकि विद्वान अधिकरण, जो कानून की एक रचना है, को अपने मूल कानून में संशोधन करने का कोई अधिकार नहीं हो सकता। विद्वान अधिकरण ने ऐसी अजीब शर्त लगाने के लिए कोई कारण, औचित्य या मिसाल नहीं दी है। यह सम्मानपूर्वक प्रस्तुत किया जाता है कि इस पहलू पर विद्वान अधिकरण का निर्देश फिर से पूर्व-दृष्टया गलत है और इसे अपास्त किया जाना चाहिए।

(viii) क्योंकि याचिकाकर्ता प्रबंधन के पास कोई और वित्तीय बोझ उठाने की क्षमता नहीं है और यह स्थिति केवल सरकारी खजाने को नुकसान पहुंचाएगी, जबकि आम जनता को इससे कोई लाभ नहीं होगा। इसके अलावा, चूंकि याचिकाकर्ता एक रुग्ण कंपनी है, इसलिए

कार्यवाही तब तक रोकी जा सकती थी जब तक कि दावेदार बीआईएफआर से अपेक्षित अनुमति प्राप्त नहीं कर लेते।

(ix) क्योंकि प्रत्यर्थीगण दावा किए गए पदों के लिए अपेक्षित योग्यताएं पूरी नहीं करते हैं। ये योग्यताएं याचिकाकर्ता निगम द्वारा सेवा शर्तों आदि की एकरूपता के लिए अपनी भर्ती नीति में निर्धारित की गई हैं। इनमें से कुछ पदों के लिए टाइपिंग स्पीड,अनुभव और शैक्षणिक योग्यता जैसी न्यूनतम नौकरी विनिर्देश की आवश्यकता होती है, जो प्रत्यर्थीगण के पास नहीं थी।

(x) क्योंकि कथित सीसीआई/डीजीयू वर्कर्स यूनियन यानी दावेदार यूनियन ने याचिकाकर्ता के समक्ष 6 सितंबर 2003 को एक ज्ञापन पेश किया था, जिसमें सीसीआई लिमिटेड के कर्मचारियों के लिए प्रचलित वाईआरएस के बराबर मुआवजा प्राप्त करके प्रबंधन के साथ कथित संबंध को समाप्त करने की मांग की गई थी। इसके बाद, कथित यूनियन ने इस उद्देश्य के लिए केंद्र सरकार के श्रम विभाग का रुख किया। उक्त आवेदन में, प्रत्यर्थीगण ने कहा कि वे प्रबंधन के साथ काम करने में रुचि नहीं रखते हैं। जब प्रत्यर्थीगण खुद ही जवाब देने वाले प्रबंधन के साथ कथित संबंध को समाप्त करने की मांग कर रहे थे, तो किसी भी राहत का कोई सवाल ही नहीं उठता।

(xi) क्योंकि एक विवाद जो कर्मकारों की सेवाओं की समाप्ति से संबंधित नहीं है, उसे औद्योगिक विवाद बनने के लिए समर्थन की आवश्यकता होती है। ऐसा समर्थन उस प्रबंधन के साथ काम करने वाले पर्याप्त संख्या में कर्मकारों या उस प्रबंधन के प्रतिनिधि व्यक्ति वाले ट्रेड यूनियन द्वारा किया जाना चाहिए। चूंकि वर्तमान मामले में, अधिकरण को संदर्भित विवाद का ऐसा कोई समर्थन नहीं था, इसलिए अधिकरण ने संदर्भ का न्यायनिर्णयन करने में कानूनी रूप से गलती की।

(xii) क्योंकि किसी भी घटना में, अधिकरण इन पहलुओं पर न्यायनिर्णय करने के लिए बाध्य था।

(xiii) क्योंकि विद्वान अधिकरण ने यह मानने में भी गलती की कि प्रबंधन ने स्वीकार किया था कि उसने वर्ष 2002 में श्री ए.के. यादव, पी.के. जैन, डी.के. श्रीवास्तव और अरविंद सिंह नामक चार व्यक्तियों की सेवाओं को नियमित किया था। विद्वान अधिकरण ने यह मानने में भी गलती की कि ये व्यक्ति प्रत्यर्थीगण से कनिष्ठ थे। प्रबंधन ने प्रस्तुत किया था कि ये व्यक्ति स्नातक बिक्री प्रशिक्षु (जीएसटी) उम्मीदवार थे, जो 2002 से बहुत पहले प्रशिक्षु के रूप में याचीगण में शामिल हुए थे और प्रशिक्षण पूरा होने पर उन्हें अवशोषित कर लिया गया था। इसके अलावा प्रत्यर्थी, प्रत्यर्थीगण के साथ किसी भी प्रकार की समानता की अपेक्षा नहीं कर सकता।

(xiv) क्योंकि दिल्ली सीमेंट ग्राइंडिंग यूनिट 9 फरवरी 1999 से कोई उत्पादन नहीं कर रही है, जिसमें दावेदार तदर्थ कर्मचारी के रूप में काम कर रहे थे।

(xv) चूंकि 9 फरवरी 1999 से दिल्ली सीमेंट ग्राइंडिंग यूनिट में कोई उत्पादन या काम नहीं हुआ था, इसलिए प्रत्यर्थीगण और ठेकेदार के अन्य कर्मचारी कारखाने के परिसर में आते थे, लेकिन कोई काम किए बिना खाली बैठे रहते थे। चूंकि कोई उत्पादन नहीं हुआ, इसलिए याचिकाकर्ता प्रबंधन के पास सेवाएं प्रदान करने हेतु ठेकेदार को राशि का भुगतान जारी रखने के लिए कोई संसाधन नहीं थे..."

6. प्रत्यर्थी कर्मकारों ने निम्नलिखित आधारों पर तत्काल याचिका का विरोध करते हुए अपना प्रति शपथपत्र दायर किया:

"4. प्रत्यर्थीगण /कर्मकार अपनी नियुक्ति की तिथि से ही कृत्रिम अवकाश के साथ लगातार काम कर रहे हैं और प्रबंधन द्वारा उनके साथ दैनिक वेतनभोगी, तदर्थ/अस्थायी कर्मचारी जैसा व्यवहार किया जा रहा है, जिसका उद्देश्य उन्हें समान वेतनमान, मजदूरी और अन्य रोजगार पाने के उनके अधिकारों से वंचित करना है, जो समान और समरूप कर्तव्यों का निर्वहन करने वाले नियमित और स्थायी कर्मचारियों को दिया जा रहा है। *इसके अलावा यहाँ यह उल्लेख करना उचित है कि उपरोक्त सभी प्रत्यर्थीगण पिछले 10 से 18 वर्षों से प्रबंधन/याचिकाकर्ता द्वारा नियोजित हैं और लगातार प्रबंधन के साथ काम कर रहे हैं और प्रबंधन/याचिकाकर्ता द्वारा स्थायी रूप से अपेक्षित हैं, लेकिन नियमित कर्मचारियों को दी जाने वाली विभिन्न सुविधाओं और लाभों से वंचित करने के लिए प्रबंधन/याचिकाकर्ता उत्तर देने वाले प्रत्यर्थीगण को अस्थायी कर्मचारी मानता है।*

5. उत्तर देने वाले प्रत्यर्थीगण/कर्मकार वर्ष 1990, 1991, 1992, और 1996 में प्रबंधन निगम की दिल्ली ग्राइंडिंग यूनिट में क्लीयरेंस, कूरियर, मैसेंजर आदि के रूप में प्रबंधन/याचिकाकर्ता की सेवा में शामिल हुए। उन्हें प्रबंधन को सभी सेवाएं प्रदान करनी थीं और काम की अनिवार्यताओं के आधार पर उन्हें एक विभाग से दूसरे विभाग में स्थानांतरित किया गया था।

6. कर्मकार/उत्तर देने वाले प्रत्यर्थीगण स्थायी और बारहमासी प्रकृति का काम कर रहे हैं जो प्रबंधन के लिए अपनी गतिविधियों को जारी रखने के लिए प्राथमिक रूप से आवश्यक है। प्रदान किए गए फंड खाते आदि और बोनस में योगदान सीधे निगम द्वारा किया जाता है।' प्रबंधन की कार्रवाई अनुचित श्रम व्यवहार के समान है जैसा कि आईडी अधिनियम 1947 की धारा 2(द)(क) के तहत अधिनियमित आईडी अधिनियम 1947,

अनुसूची V में परिकल्पित है। अनुसूची V का खंड 10 इस प्रकार है:-

> 10. स्थायी कर्मकारों की हैसियत और विशेषाधिकारों से वंचित करने के उद्देश्य से कर्मकारों को "बदली", आकस्मिक या अस्थायी रूप में नियोजित करना और उन्हें उस रूप में वर्षों तक चलते रहने देना।

7. कि कर्मकारों को उनके उसी वेतनमान और अन्य लाभ पाने के कानूनी अधिकार से वंचित किया जा रहा है जो प्रबंधन द्वारा नियोजित नियमित कर्मचारियों को दिया गया है।

8. जब पर्याप्त अवधि बीत जाने के बावजूद उत्तर देने वाले प्रत्यर्थीगण की सेवाएं नियमित नहीं की गईं, तो इससे व्यथित होकर, उत्तर देने वाले प्रत्यर्थीगण ने दिल्ली उच्च न्यायालय में सि.रि.या. संख्या 5026/1999 के माध्यम से एक रिट याचिका दायर की, इसे खारिज कर दिया गया और उत्तर देने वाले प्रत्यर्थीगण ने एल.पी.ए. संख्या 24/2002 प्रस्तुत किया, जिसे बाद में एकल न्यायाधीश के समक्ष समीक्षा प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता के साथ वापस ले लिया गया, पक्षकारगण को सुनने के बाद माननीय न्यायालय ने उत्तर देने वाले प्रत्यर्थीगण को आईडी अधिनियम, 1947 के तहत प्रदान किए गए उपयुक्त प्राधिकारी से संपर्क किया।

7. प्रत्यर्थी ने निम्नलिखित आधारों पर एक अतिरिक्त शपथपत्र दायर किया है:

> *2. औद्योगिक एवं वित्तीय पुनर्निर्माण बोर्ड (बीआईएफआर) ने 3 मई, 2006 के आदेश के माध्यम से पुनर्वास योजना को मंजूरी दी थी, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ दिल्ली ग्राइंडिंग यूनिट को बंद*

करने की परिकल्पना की गई थी, जिसमें प्रत्यर्थीगण अनुबंध कर्मचारी के रूप में काम कर रहे थे। बीआईएफआर के आदेश के खिलाफ अपील को औद्योगिक एवं वित्तीय पुनर्निर्माण अपील प्राधिकरण (एएआईएफआर) ने 17.11.2006 के आदेश के तहत खारिज कर दिया था। एएआईएफआर के आदेश के खिलाफ रिट याचिका को इस माननीय न्यायालय की खंडपीठ ने 11.01.2008 के निर्णय के माध्यम से खारिज कर दिया था और इस माननीय न्यायालय की खंडपीठ की विशेष अनुमति याचिका को माननीय उच्चतम न्यायालय ने 28.4.2008 के आदेश के माध्यम से खारिज कर दिया था।

3. इसके बाद आईडी अधिनियम की धारा 25-0 *के तहत दिल्ली ग्राइंडिंग यूनिट को बंद करने की अनुमति के लिए याचिकाकर्ता द्वारा भारत सरकार, श्रम और रोजगार मंत्रालय के समक्ष दायर आवेदन को सरकार द्वारा दिनांक* 14 *जुलाई*, 2008 *के आदेश के माध्यम से मंजूर कर लिया गया था। इसके बाद याचिकाकर्ता प्रबंधन ने* 31 *अक्टूबर*, 2008 *से दिल्ली ग्राइंडिंग यूनिट को बंद कर दिया। इस प्रकार, यह सम्मानपूर्वक प्रस्तुत किया जाता है कि आज तक, कोई दिल्ली ग्राइंडिंग यूनिट अस्तित्व में नहीं है जिसमें प्रत्यर्थीगण काम कर रहे थे। इसे औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा* 25-*ण के अंतर्गत केन्द्र सरकार से विधिवत अनुमति प्राप्त होने के बाद बंद कर दिया गया है। दिल्ली ग्राइंडिंग यूनिट (डीजीयू) में काम करने वाले सभी कर्मकार अब सीसीआई लिमिटेड में काम नहीं करते हैं।*

8. याचिकाकर्ता और प्रत्यर्थी ने अंततः अपनी लिखित प्रस्तुतियाँ दायर की हैं।

<u>प्रस्तुतियाँ</u>

(याचिकाकर्ता की ओर से)

9. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि विद्वान औद्योगिक अधिकरण ने आक्षेपित अधिनिर्णय पारित करने में अपने क्षेत्राधिकार का अतिक्रमण किया है। यह प्रस्तुत किया गया है कि विद्वान औद्योगिक अधिकरण ने निर्देश-निबंधन से परे जाकर उस मुद्दे पर निर्णय दिया है जो संदर्भ का हिस्सा नहीं था क्योंकि निर्देश-निबंधन के अनुसार, विद्वान औद्योगिक अधिकरण को संदर्भित किया गया एकमात्र प्रश्न प्रत्यर्थीगण के नियमितीकरण के विषय में था। हालाँकि, यह निर्देश-निबंधन से परे चला गया और प्रत्यर्थीगण को देय छंटनी प्रतिकर की मात्रा पर निर्णय लिया, यदि उनकी अंततः छंटनी की जाती है। छंटनी प्रतिकर पर यह निर्णय विद्वान औद्योगिक अधिकरण को दिए गए संदर्भ के दायरे में नहीं था और इसलिए, इसके क्षेत्राधिकार से बाहर है।

10. यह भी प्रस्तुत किया गया है कि छंटनी प्रतिकर का मुद्दा नियमितीकरण के मुद्दे से संबंधित नहीं है, इसलिए, विशिष्ट संदर्भ के अभाव में इस पर निर्णय नहीं किया जा सकता था, और इसलिए विद्वान अधिकरण ने अधिनियम की धारा 10 का उल्लंघन करते हुए कार्य किया है।

11. यह तर्क दिया गया है कि अधिनियम की धारा 10 में यह प्रावधान है कि वह अपने निर्णय को उसके समक्ष निर्दिष्ट मुद्दों तक ही सीमित रखेगा तथा यह

निर्देश-निबंधन से आगे नहीं जाएगा, इसलिए छंटनी प्रतिकर के मुद्दे पर निर्णय देकर विद्वान अधिकरण ने अधिनियम के प्रावधान का उल्लंघन किया है।

12. यह प्रस्तुत किया गया है कि विद्वान अधिकरण ने प्रत्यर्थीगण की छंटनी की पूर्व शर्त के रूप में याचिकाकर्ता को इन्हे मुआवजे के रूप में चार साल का वेतन देने का निर्देश देकर अधिनियम की धारा 25-च के विपरीत काम किया है।

13. यह भी प्रस्तुत किया गया है कि अधिनियम की धारा 25च(ख) के अनुसार, एक कर्मकार को 6 महीने से अधिक पूरी की गई सेवा के प्रत्येक वर्ष के लिए छंटनी प्रतिकर के रूप में 15 दिनों का औसत वेतन दिया जाना है। विद्वान अधिकरण ने उक्त प्रावधान को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया है और प्रत्यर्थीगण को अधिनियम के तहत वास्तव में जितने के वे हकदार हैं, उससे कहीं अधिक छंटनी प्रतिकर दिया है।

14. यह प्रस्तुत किया गया है कि विद्वान अधिकरण द्वारा दिया गया मुआवजा अधिनियम की धारा 25-च के तहत निर्धारित सीमाओं से अधिक है, क्योंकि उपरोक्त प्रावधान के अनुसार, छंटनी की स्थिति में श्रमिकों को देय मुआवजे की राशि निर्धारित करने के लिए एक वैधानिक ढांचा है, और यह उनकी निरंतर सेवा की अवधि पर आधारित है। हालाँकि, विद्वान अधिकरण का अधिनिर्णय छंटनी प्रतिकर के रूप में चार वर्ष का वेतन देकर उपरोक्त वैधानिक सीमाओं से परे चला जाता है।

15. यह भी प्रस्तुत किया गया है कि विद्वान अधिकरण यह विचार करने में विफल रहा कि उनके अपने मामले के अनुसार भी, प्रत्यर्थी संख्या 1 और 5 केवल 1990 से ही सेवा में थे, इसलिए, अधिनिर्णय की तिथि पर भी, वे अधिनियम की धारा 25-एफ के अनुसार केवल 8 महीने के औसत वेतन के हकदार थे।

16. यह तर्क दिया गया है कि विद्वान अधिकरण, जो कि कानून द्वारा स्थापित है, अपने मूल कानून से अधिक मुआवजा देने का अधिनिर्णय नहीं दे सकता है और विद्वान अधिकरण ने उस विशेष निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कोई कारण नहीं बताए हैं।

17. उपर्युक्त प्रस्तुतियों के आलोक में, याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि आक्षेपित अधिनिर्णय कई अवैधताओं से ग्रस्त है तथा इसे अपास्त किया जाना चाहिए, तथा इस याचिका को अनुमति दी जानी चाहिए।

(प्रत्यर्थी की ओर से)

18. *इसके विपरीत,* प्रत्यर्थीगण की ओर से पेश होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि आक्षेपित अधिनिर्णय किसी भी अवैधता से ग्रस्त नहीं है जो इस न्यायालय के हस्तक्षेप के योग्य है।

19. यह प्रस्तुत किया गया है कि विद्वान अधिकरण ने निर्देश-निबंधन से बाहर जाने का साहस नहीं किया है तथा प्रत्यर्थी को छंटनी प्रतिकर देने का उचित आदेश दिया है।

20. यह तर्क दिया गया है कि प्रत्यर्थीगण याचिकाकर्ता की यूनिट के लिए पर्याप्त समय से काम कर रहे थे और स्थायी और बारहमासी प्रकृति का काम कर रहे थे, इसलिए, वे नियमितीकरण के हकदार थे।

21. यह प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता वित्तीय कठिनाइयों का हवाला देते हुए प्रत्यर्थीगण को नियमितीकरण से गलत तरीके से इनकार कर रहे थे, जबकि दूसरी ओर, वे उन पदों के लिए सीधे अन्य कर्मचारियों की भर्ती कर रहे थे जो प्रत्यर्थीगण से कनिष्ठ थे।

22. यह प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता ने अधिनियम की धारा 2(द)(क) के साथ पठित अनुसूची V (खंड 10) के तहत परिभाषित "अनुचित श्रम अभ्यास" को अपनाया है, जिससे प्रत्यर्थीगण को नियमितीकरण की मांग करने के उनके अधिकार से वंचित किया गया है।

23. यह प्रस्तुत किया गया है कि आक्षेपित अधिनिर्णय में कोई कमी नहीं है, क्योंकि इसमें मुआवजे के रूप में चार वर्ष का वेतन प्रदान किया गया है, क्योंकि

याचिकाकर्ता ने स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना भी तैयार की थी, जिसमें यह अपने नियमित कर्मचारियों को 60 महीने का वेतन देने की पेशकश कर रहा था।

24. उपर्युक्त प्रस्तुतियों के मद्देनजर, यह प्रस्तुत किया जाता है कि आक्षेपित अधिनिर्णय में कोई त्रुटि नहीं है, इसलिए, वर्तमान याचिका खारिज किये जाने योग्य है।

<u>विश्लेषण और निष्कर्ष</u>

25. पक्षकारगण के विद्वान अधिवक्तागण को विस्तार से सुना गया तथा अपनी-अपनी प्रस्तुतियों को प्रमाणित करने के लिए अधिवक्ता द्वारा जिन अभिलेखों पर भरोसा किया गया, उनका अवलोकन किया।

26. याचिकाकर्ता का कहना है कि आक्षेपित अधिनिर्णय कानून की दृष्टि से गलत है, क्योंकि विद्वान अधिकरण ने उस मुद्दे पर निर्णय देने में संदर्भ से परे जाकर निर्णय दिया, जो उसके समक्ष कभी प्रस्तुत ही नहीं किया गया था, तथा उसने अधिनियम की धारा 25-च के अंतर्गत देय राशि से अधिक छंटनी प्रतिकर प्रदान किया। इसलिए, यह तर्क दिया गया है कि 'छंटनी प्रतिकर' का मुद्दा 'नियमितीकरण' के मुद्दे से संबंधित नहीं है, इसलिए विद्वान अधिकरण इस पर निर्णय नहीं दे सकता था।

27. प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुति में, प्रत्यर्थी कर्मकारों के विद्वान अधिवक्ता ने याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत किए गए तर्कों का जोरदार विरोध किया है, जिसमें कहा

गया है कि विद्वान अधिकरण ने छंटनी प्रतिकर देने का सही आदेश दिया है, क्योंकि प्रत्यर्थीगण को याचिकाकर्ता द्वारा पर्याप्त अवधि के लिए नियोजित किया गया था और उन्होंने स्थायी प्रकृति का काम किया था।

28. इस न्यायालय के समक्ष जो मुद्दा अधिनिर्णय के लिए आता है वह यह है कि क्या विद्वान अधिकरण छंटनी प्रतिकर पर निर्णय देने में निर्देश-निबंधन से परे गया है या नहीं।

29. इस मोड़ पर, यह न्यायालय निर्देश-निबंधन के दायरे में निर्णय देने में औद्योगिक अधिकरण की सीमित शक्तियों से संबंधित न्यायशास्त्रीय पहलू को संदर्भित करना उचित समझता है और वह राहत प्रदान करने में यह उससे आगे नहीं बढ़ सकता है।

30. औद्योगिक अधिकरण कानून द्वारा स्थापित है और इसका क्षेत्राधिकार उपयुक्त सरकार द्वारा मामले को इसे निर्दिष्ट किए जाने पर आधारित है। अधिकरण की उन मुद्दों या मुद्दों पर निर्णय लेने में सीमित भूमिका है जो निर्देश-निबंधन से संबंधित हैं। यह अपने आपको विशिष्ट रूप से संदर्भित मुद्दों तक ही सीमित रखेगा तथा निर्देश-निबंधन से बाहर नहीं जाएगा। औद्योगिक अधिकरण अर्ध-न्यायिक प्रकृति का है और इसमें पक्षकारगण द्वारा उठाए गए किसी भी विवाद पर न्यायनिर्णय करने की कोई अंतर्निहित शक्ति नहीं है। यह

अधिनियम द्वारा उस पर लगाई गई सीमाओं के भीतर विवादों पर निर्णय लेने के लिए बाध्य है और उसे इसके प्रावधानों के अनुसार कार्य करना होता है।

31. जैसा कि अधिनियम की धारा 10 (1) के तहत निर्धारित किया गया है, 'उपयुक्त सरकार' ने अधिकरण द्वारा न्यायनिर्णयन के लिए मुद्दों को निर्दिष्ट किया है। औद्योगिक अधिकरण अपने निर्णय को उन बिंदुओं और उनसे संबद्ध मामलों तक सीमित रखने के लिए बाध्य है।

32. इसके अलावा अधिनियम की धारा 10(4) के अनुसार औद्योगिक अधिकरण पर यह दायित्व है कि वह अपने निर्णय को निर्देश-निबंधन या उससे संबंधित किसी मामले तक सीमित रखे। अधिनियम के प्रासंगिक भाग को यहां नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है:

> ***[(4) जहां कि किसी औद्योगिक विवाद को श्रम न्यायालय, अधिकरण या राष्ट्रीय अधिकरण] को इस धारा के अधीन निर्देशित करने वाले किसी आदेश में या किसी पश्चात्वर्ती आदेश में समुचित सरकार ने न्यायनिर्णयन के लिए विवाद के प्रश्न विनिर्दिष्ट कर दिए हैं वहां, यथास्थिति, श्रम न्यायालय या अधिकरण या राष्ट्रीय अधिकरण] अपने न्यायनिर्णय को उन प्रश्नों और उनसे आनुषंगिक विषयों तक ही सिमित रखेगा।***

33. वैधानिक ढांचे का विश्लेषण करने के बाद, यह न्यायालय संदर्भ आदेश और आक्षेपित अधिनिर्णय के निष्कर्षों का विश्लेषण करना और विद्वान अधिकरण द्वारा दिए गए तर्क का पता लगाना आवश्यक समझता है।

34. इस स्तर पर, यह न्यायालय ***पॉटरी मजदूर पंचायत बनाम परफेक्ट पॉटरी कंपनी लिमिटेड*** में उच्चतम न्यायालय के निर्णय का संदर्भ देना आवश्यक समझता है, जिसमें न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि औद्योगिक अधिकरण अपना क्षेत्राधिकार निर्देश-निबंधन से प्राप्त करता है और वह उससे परे नहीं जा सकता है। माननीय न्यायालय ने माना कि जब संदर्भ की शर्तें औद्योगिक यूनिट को बंद करने की वैधता पर निर्णय लेने तक ही सीमित थीं, तो अधिकरण इस मुद्दे पर निर्णय नहीं दे सकता था कि क्या कोई बंद हुआ था। निर्णय का प्रासंगिक उद्धरण यहां नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है:

> "11. *अपीलार्थी की ओर से श्री गुप्ता द्वारा दी गई गहनता से सोची-समझी दलील को सुनने के बाद, हम इस राय पर पहुंचे हैं कि प्रथम प्रश्न पर उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण सही है। निर्देश-निबंधन से पता चलता है कि पक्षकारगण के बीच विवाद का मुद्दा प्रत्यर्थी द्वारा अपना व्यवसाय बंद करने का तथ्य नहीं था, बल्कि प्रत्यर्थी द्वारा व्यवसाय बंद करने के निर्णय का औचित्य और औचित्य था। इसीलिए यह कहने के लिए संदर्भ व्यक्त किए गए कि क्या व्यवसाय को बंद करने का प्रस्ताव उचित और न्यायसंगत था। दूसरे शब्दों में, संदर्भों के अनुसार, सरकार द्वारा अधिकरणों को इस सवाल पर निर्णय देने के लिए*

नहीं बुलाया गया था कि क्या वास्तव में व्यवसाय बंद हो गया था या व्यवसाय बंद करने के बहाने प्रबंधन द्वारा श्रमिकों को बाहर कर दिया गया था। ***संदर्भ इस संकीर्ण प्रश्न तक सीमित होने के कारण कि क्या बंद करना उचित और न्यायोचित था, अधिकरणों के पास मूल निर्देश-निबंधन के अनुसार, इसे बंद करने के तथ्य के पीछे जाने और इस प्रश्न की जांच करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं था कि क्या व्यवसाय वास्तव में प्रबंधन द्वारा बंद किया गया था।"***

35. इसी प्रकार, ***स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एंड जयपुर बनाम ओम प्रकाश शर्मा*** में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने माना कि जिन मामलों में श्रम न्यायालय निर्देश-निबंधन से आगे जाता है, वहां अधिनिर्णय को क्षेत्राधिकार के अभाव से ग्रस्त माना जाता है। विशेष रूप से, न्यायालय ने कहा कि जब संदर्भ का दायरा यह निर्धारित करने तक सीमित है कि धारा 25ज का उल्लंघन हुआ था या नहीं, और अधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि ऐसा कोई उल्लंघन नहीं हुआ था, तो वह सेवा समाप्ति के आदेश को अपास्त करने के लिए आगे नहीं बढ़ सकता। प्रासंगिक पैराग्राफ यहां पुन: प्रस्तुत किया गया है:

"14. *तत्काल मामले में, श्रम न्यायालय का अधिनिर्णय अवैधता से ग्रस्त है, जो अभिलेख से स्पष्ट है।* ***श्रम न्यायालय का क्षेत्राधिकार संदर्भ के आदेश से उत्पन्न हुआ था। यह निर्देश-निबंधन से परे जाकर कोई आदेश पारित नहीं कर सकता था। अधिनिर्णय पारित करते समय, यदि श्रम न्यायालय अपने***

क्षेत्राधिकार से आगे बढ़ता है, तो यह माना जाना चाहिए कि यह अधिनिर्णय क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटि से ग्रस्त है। *न्यायिक समीक्षा की अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा इसे ठीक किया जा सकता था। इसलिए, उच्च न्यायालय ने अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने से इनकार करके स्पष्ट रूप से त्रुटि की है। इसलिए, उच्च न्यायालय के अधिनिर्णय और निर्णय को बरकरार नहीं रखा जा सकता है। परिणामस्वरूप, अपील को अनुमति दी जाती है और उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त किया जाता है। बकाया वेतन के साथ पुनर्नियुक्ति के आदेश की सीमा तक अधिनिर्णय को अपास्त किया जाता है। इस प्रकार, उच्च न्यायालय में अपीलार्थी द्वारा दायर रिट याचिका को अनुमति दी जाती है।*

12. ***इसलिए, श्रम न्यायालय द्वारा निर्धारण के लिए भेजा गया विशिष्ट मुद्दा अधिनियम की धारा 25-ज के उल्लंघन के संबंध में विवाद से संबंधित था। यदि उक्त प्रावधानों का उल्लंघन नहीं पाया गया होता, तो श्रम न्यायालय द्वारा समाप्ति के आदेश को अपास्त करने का प्रश्न नहीं उठता और न ही उठ सकता था।*** *विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस आधार पर कार्यवाही की कि उच्च न्यायालय, अपने रिट क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए, श्रम न्यायालय के अधिनिर्णय पर अपील नहीं कर सकता। विद्वान एकल न्यायाधीश सही थे, लेकिन तब, केवल इसलिए कि न्यायिक समीक्षा की अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय का क्षेत्राधिकार सीमित था, इसका मतलब यह नहीं होगा कि एक क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटि को भी ठीक नहीं किया जा सकता था। भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के प्रावधान तभी लागू होंगे, जब अवर अधिकरण ने अन्य बातों के साथ-साथ कोई क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटि की हो। अवर अधिकरण*

द्वारा पारित आदेशों के संबंध में न्यायिक समीक्षा का आधार क्या होगा, यह अब अनिर्णीत विषय नहीं रह गया है।"

36. ***एन.डी.एम.सी. बनाम जय राम*** में, इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि "नियमितीकरण" और "समाप्ति" के मुद्दे एक दूसरे से संबंधित नहीं हैं। न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यदि अधिकरण 'नियमितीकरण' की राहत पर निर्णय नहीं ले सकता था और उसे प्रदान नहीं कर सकता था, जब संदर्भ का दायरा और साथ ही किसी पक्षकार की प्रार्थना 'पुनर्नियुक्ति' की राहत तक सीमित थी। न्यायालय के निष्कर्ष निम्नानुसार हैं:

"8. *"प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर समुचित विचार करने के पश्चात, मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि जहां तक श्रम न्यायालय द्वारा 50% बकाया वेतन के साथ कर्मकार को दी गई नौकरी में बहाली की राहत का संबंध है, इसमें इस न्यायालय द्वारा किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि इस संबंध में याचिकाकर्ता द्वारा कोई चुनौती नहीं दी गई है और याचिकाकर्ता का अपना कथन यह रहा है कि वह प्रत्यर्थी - कर्मकार की मस्टर रोल कर्मचारी के रूप में नौकरी कभी समाप्त नहीं करना चाहता था।* ***हालांकि, मैं प्रबंधन के विद्वान अधिवक्ता के इस निवेदन से पूर्णतः सहमत हूं कि श्रम न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी - कर्मकार को नियमितीकरण की राहत देने का निर्णय बिल्कुल भी उचित नहीं था, क्योंकि यह ऐसा विवाद नहीं था जिसे समुचित सरकार ने उसको भेजा था और वास्तव में, दावे के विवरण में स्वयं कर्मकार ने भी उसे नियमितीकरण की राहत प्रदान करने के लिए***

कोई प्रार्थना नहीं की थी। *अब यह सुस्थापित है कि औद्योगिक अधिकरण या श्रम न्यायालय निर्देश-निबंधन से आगे नहीं बढ़ सकते हैं और कर्मकार को कोई राहत नहीं दे सकते हैं। उसे अपने निर्णय को निर्णय के लिए निर्दिष्ट बिंदु (बिंदुओं) या उससे संबंधित किसी मामले तक सीमित रखना होगा। वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थी के अपने कथन के अनुसार उसकी सेवाएं समाप्त कर दी गई थीं और इसलिए वह सेवा में पुनर्नियुक्ति होने का हकदार था।* ***इसलिए, जब तक वह सेवा में नहीं था, किसी भी प्राधिकारी के लिए उसके नियमितीकरण का निर्देश देने का कोई अवसर नहीं था और उस मामले को किसी भी तरह से प्रत्यर्थी-कर्मकार द्वारा, याचिकाकर्ता-प्रबंधन द्वारा उसकी सेवाएं समाप्त किए जाने के संबंध में, उठाए गए विवाद से संबद्ध नहीं कहा जा सकता…"***

37. उपर्युक्त निर्णयों के मद्देनजर, यह कानून का एक स्थापित सिद्धांत है कि एक औद्योगिक अधिकरण अपने निर्देश-निबंधन द्वारा सख्ती से शासित होता है और केवल उन मामलों पर ही अधिनिर्णय कर सकता है जो स्पष्ट रूप से उसके पास भेजे गए हों या संदर्भ से संबंधित हों। कोई भी निर्णय या न्यायनिर्णयन जो संदर्भ के दायरे से बाहर जाता है, उसे औद्योगिक अधिकरण द्वारा पारित अधिनिर्णय में क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटि माना जाएगा।

38. अब वर्तमान याचिका के गुणागुण पर विचार करते हुए, संदर्भ आदेश का प्रासंगिक पैराग्राफ नीचे पुन: प्रस्तुत किया जा रहा है:

"क्या जुलाई 1991 से सीमेंट कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, नई दिल्ली की दिल्ली सीमेंट ग्राइंडिंग यूनिट में काम करने वाले भूतपूर्व अस्थायी क्लर्कों, अर्थात् श्री प्रकाश वीर तोमर, राज सिंह चपराना, राज कुमार तोमर, ताज कुमार, एकनाथ सिंह, एस.एन. पाठक और राजिंदर कुमार की सेवाओं के नियमितीकरण के संबंध में सीसीआई/डीजीयू वर्कर्स यूनियन की मांग न्यायसंगत, निष्पक्ष और वैध है? यदि हाँ, तो कर्मकार किस राहत के हकदार हैं और किस तारीख से?"

39. निर्देश-निबंधन के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि निर्देश-निबंधन याचिकाकर्ता के कर्मचारियों यानी प्रत्यर्थी को जुलाई 1991 से नियमित करने के मुद्दे पर निर्णय लेने से संबंधित था। आदेश में छंटनी प्रतिकर के मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए कोई संदर्भ शामिल नहीं था। यह सीमा उस संकीर्ण दायरे को रेखांकित करती है जिसके भीतर औद्योगिक अधिकरण से काम करने की उम्मीद की जाती थी।

40. अब यह न्यायालय आक्षेपित अधिनिर्णय पर विचार करेगा तथा उक्त निर्णय का प्रासंगिक अंश नीचे प्रस्तुत है:

"कर्मकारों को नियमित भर्ती प्रक्रिया के तहत नहीं रखा गया है। वे पूर्णतया तदर्थ एवं अस्थायी हैं तथा उन्हें कृत्रिम विराम के बाद जारी रखा गया है। उनका काम निरंतर चलता रहता है क्योंकि कृत्रिम ब्रेक कर्मकारों की किसी गलती के कारण नहीं होते।

काम अब निरन्तर एवं नियमित प्रकृति का नहीं रह गया है।आगे की भर्ती पर प्रतिबंध है, लेकिन इन कर्मकारों को आगे के प्रतिबंध के आधार पर नियुक्ति से नहीं रोका गया है।डीजीयू की वित्तीय स्थिति खराब है। प्रबंधन ने सक्षम प्राधिकारी के समक्ष यह उद्योग बंद करने की अनुमति के लिए आवेदन किया है। संसाधनों की कमी के कारण प्रबंधन को वित्तीय बोझ का सामना करना पड़ रहा है। यह स्वीकार किया जाता है कि 1999 के बाद सीमेंट का कोई उत्पादन नहीं हुआ है। यह भी स्वीकार किया गया है कि इन कर्मकारों को न्यायालयों के आदेशों के आलोक में 1999 से आज तक सेवा में रखा गया है।

उमा देवी के मामले में संविधान पीठ ने स्पष्ट रूप से कहा है कि यदि कोई कर्मकार न्यायालयों के आदेशों के आधार पर नहीं बल्कि 10 वर्षों से लगातार काम कर रहा है, तो उसके मामले को नियमितीकरण हेतु विचार किया जा सकता है।वर्तमान मामले में यूनिट को 1999 में रुग्ण घोषित कर दिया गया था। स्थगन आदेशों के मद्देनजर इन कर्मकारों को जारी रखा गया है। कर्मकारों ने स्वयं सीसीआई लिमिटेड के कर्मचारियों को दी जाने वाली वीआरएस के बराबर मुआवजा पाने के लिए आवेदन किया है। इसलिए दावेदार वीआरएस प्राप्त करने के लिए संबंध विच्छेद की मांग कर रहे हैं। वास्तव में दावेदारों के लिए कोई काम नहीं है।

वर्तमान कार्यवाहियां क्षेत्राधिकार से बाहर नहीं है। दावेदारों को तदर्थ आधार पर रखा गया है, लेकिन उन्हें लम्बे समय तक जारी रखा गया है। उनकी उम्र ज्यादा हो गई है। उमा देवी के

मामले को देखते हुए उनकी सेवाएं नियमित नहीं की जा सकतीं। उन्होंने काफी समय तक नौकरी की है और उनकी उम्र ज्यादा हो गई है। उन्हें नियमित कर्मचारियों के बराबर वेतन नहीं दिया जा सकता क्योंकि तदर्थ और अस्थायी कर्मचारियों पर कोई जवाबदेही और जिम्मेदारी नहीं होती। इसलिए उन्हें नियमित कर्मचारी का दर्जा नहीं दिया जा सकता। वे समान काम के लिए समान वेतन पाने के हकदार नहीं हैं।

प्रबंधन ने उन्हें 6 वर्षों की लम्बी अवधि तक जारी रखा है।यदि प्रबंधन को उनकी छंटनी आवश्यक लगती है तो वे अपनी लंबी सेवा अवधि के आधार पर चार वर्ष के वेतन के बराबर मुआवजा पाने के हकदार हैं। वेतन की गणना 2005 के अनुपातिक वेतन के आधार पर की जानी है।

कर्मकारों ने खुद माना है कि दिल्ली यूनिट में कोई काम नहीं है। उन्हें एड-हॉक आधार पर सिर्फ दिल्ली यूनिट के लिए रखा गया है, इसलिए उन्हें नियमित कर्मचारियों के तौर पर अन्य यूनिट में नहीं भेजा जा सकता।

मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए सभी कर्मकार छंटनी प्रतिकर के मामले में चार साल के वेतन के बराबर मुआवजे के हकदार हैं।

प्रबंधन को निर्देश दिया जाता है कि वह इन कर्मचारियों की छंटनी के समय मुआवजे के रूप में चार वर्ष का वेतन भुगतान करे।

41. आक्षेपित अधिनिर्णय की सावधानीपूर्वक जांच करने पर यह पता चलता है कि विद्वान अधिकरण ने माना है कि चूंकि प्रत्यर्थीगण न्यायालय के स्थगन आदेशों के कारण पर्याप्त समय से काम कर रहे हैं, इसलिए प्रत्यर्थी कर्मकारों के मामले को नियमितीकरण के लिए विचारित नहीं किया जा सकता है और कर्मकारों को याचिकाकर्ता संस्था में नियमित कर्मचारियों के बराबर भुगतान नहीं किया जा सकता है।

42. इसने आगे कहा कि चूंकि प्रत्यर्थी कर्मकारों ने 6 वर्षों की अवधि तक काम किया है, इसलिए यदि याचिकाकर्ता प्रत्यर्थी कर्मकारों को निकालना उचित समझता है तो वे 4 वर्षों के वेतन के मुआवजे के हकदार हैं।

43. विद्वान अधिकरण ने आगे कहा कि चूंकि तथ्यों के आधार पर यह स्वीकार किया गया है कि प्रत्यर्थी कर्मकारों को याचिकाकर्ता की दिल्ली यूनिट में तदर्थ आधार पर काम करने के लिए नियुक्त किया गया था और दिल्ली यूनिट में कोई काम नहीं है। इसलिए, प्रत्यर्थी कर्मकार छंटनी प्रतिकर के मामले में चार साल के वेतन के बराबर मुआवजे के हकदार हैं और तदनुसार, याचिकाकर्ता प्रबंधन ने प्रत्यर्थी कर्मकारों को इसके लिए भुगतान करने का निर्देश दिया।

44. आक्षेपित अधिनिर्णय में यह स्पष्ट है कि औद्योगिक अधिकरण ने छंटनी प्रतिकर देकर अपने क्षेत्राधिकार की सीमाओं का उल्लंघन किया है। विद्वान अधिकरण का आदेश विशेष रूप से प्रत्यर्थीगण द्वारा की गई नियमितीकरण की

मांग पर निर्णय लेने तक सीमित था। हालांकि, इसने छंटनी प्रतिकर तय करने का भी जोखिम उठाया, जो संदर्भ के दायरे से बाहर का मामला था। अधिकरण द्वारा यह अतिक्रमण उसके निर्धारित क्षेत्राधिकार का स्पष्ट उल्लंघन दर्शाता है।

45. इस न्यायालय का मानना है कि नियमितीकरण और छंटनी प्रतिकर के मुद्दे अलग-अलग हैं और एक-दूसरे से जुड़े या संबंधित नहीं हैं। नियमितीकरण की मांग करने का एक कर्मचारी का अधिकार उसके रोजगार की अवधि से संबंधित है, जो उसे विशिष्ट मानदंडों या शर्तों के आधार पर एक अस्थायी या संविदात्मक भूमिका से स्थायी पद पर जाने की अनुमति देता है। इसके विपरीत, छंटनी प्रतिकर तब लागू होता है जब कोई नियोक्ता किसी कर्मचारी की सेवाओं को समाप्त करता है। यह अचानक नौकरी छूटने के आर्थिक प्रभाव को कम करने के लिए वित्तीय सहायता के रूप में कार्य करता है।

46. इसलिए, नियमितीकरण का मुद्दा रोजगार की स्थिति से संबंधित है और इसे रोजगार की अवधि के दौरान आगे बढ़ाया जा सकता है, जबकि छंटनी प्रतिकर समाप्ति का परिणाम है और समाप्ति के बाद ही प्रासंगिक है। ये मुद्दे अलग-अलग तरीके से और कर्मकार के रोजगार के विभिन्न चरणों में संचालित होते हैं।

47. निर्देश-निबंधन के अनुसार, विद्वान अधिकरण नियमितीकरण के दावे की वैधता पर निर्णय लेने तक ही सीमित रहने के लिए बाध्य था। यह इस पहलू पर मूल्यांकन कर सकता है- क्या कर्मचारी लागू कानूनों, रोजगार अनुबंध, या किसी

भी प्रासंगिक समझौते या नीतियों के अनुसार नियमितीकरण के मानदंडों को पूरा करता है।

48. ऐसे मामलों में अधिकरण का आदेश छंटनी प्रतिकर के मुद्दे पर निर्णय लेने तक विस्तारित नहीं होता है। छंटनी प्रतिकर एक अलग मामला है जो अधिकरण के क्षेत्राधिकार में तभी आता है जब सेवाओं की समाप्ति हो गई हो, और छंटनी प्रतिकर के लिए कर्मचारी द्वारा दावा किया गया हो। अधिकरण द्वारा किसी ऐसे मुद्दे पर निर्णय लेना जो उसके पास नहीं भेजा गया है, उसके क्षेत्राधिकार से बाहर होगा और ऐसी कार्रवाई अधिनियम की धारा 10(4) के विरुद्ध होगी जो अधिकरण को अपने अधिनिर्णय को उसके पास भेजे गए मुद्दों तक सीमित रखने का आदेश देती है।

49. याचिकाकर्ता का यह तर्क कि जब अधिकरण ने यह निर्धारित कर लिया कि प्रत्यर्थीगण को नियमित नहीं किया जा सकता, तब संदर्भ समाप्त हो गया, उचित है। एक बार जब अधिकरण ने नियमितीकरण के बारे में अपना निर्णय दे दिया, जो कि उसके पास भेजा गया प्राथमिक मुद्दा था, तो छंटनी प्रतिकर पर निर्णय लेने की कोई और आवश्यकता नहीं थी।

50. अधिकरण का क्षेत्राधिकार संदर्भ के दायरे से जुड़ा हुआ था, और नियमितीकरण मुद्दे पर निर्णय पर पहुंचने के बाद इसका अधिकार समाप्त हो गया। इस बिंदु से आगे कोई भी अतिरिक्त अधिनिर्णय अनावश्यक होगा और

औद्योगिक अधिकरण की कार्यवाही को नियंत्रित करने वाले स्थापित सिद्धांतों के विपरीत होगा।

51. इस न्यायालय ने आगे टिप्पणी की कि विद्वान अधिकरण ने कर्मकार को चार वर्ष के वेतन के बराबर मुआवजा दिया है और यह अधिनियम की धारा 25-च में उल्लिखित प्रावधानों के विपरीत है, जिसमें यह प्रावधान है कि पूरी की गई सेवा के प्रत्येक वर्ष के लिए 15 दिनों के वेतन के बराबर मुआवजा राशि छंटनी प्रतिकर के रूप में दी जाएगी। आक्षेपित अधिनिर्णय में, विद्वान अधिकरण ने चार साल का वेतन दिया जो धारा 25-एफ के तहत निर्धारित छंटनी प्रतिकर की राशि से अधिक है, इसलिए, यह वैधानिक दिशा-निर्देशों से विचलन है।

52. इसके अलावा, अधिकरण के अधिनिर्णय में पारदर्शिता और औचित्य का अभाव है, क्योंकि यह मुआवजे के रूप में चार साल का वेतन देने के निर्णय का समर्थन करने के लिए कोई तर्क या गणना प्रदान करने में विफल रहा है। ऐसे विवरणों का अभाव उस आधार पर प्रश्न उठाता है जिसके आधार पर विद्वान अधिकरण ने छंटनी प्रतिकर की मात्रा निर्धारित की।

53. उपर्युक्त चर्चा के अनुसार, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि विद्वान अधिकरण ने छंटनी प्रतिकर के मुद्दे पर निर्णय देकर अपने क्षेत्राधिकार का अतिक्रमण किया है, जो संदर्भ के दायरे से बाहर था और विद्वान अधिकरण ने

अधिनियम की धारा 25-च के तहत निर्धारित राशि से अधिक मुआवजा देने में गलती की है।

<u>निष्कर्ष</u>

54. औद्योगिक अधिकरण कानून द्वारा स्थापित है और इसे संदर्भ के आधार पर क्षेत्राधिकार प्राप्त होता है। यह संदर्भ की वैधता के सवाल पर विचार नहीं कर सकता। अधिकरण की भूमिका विशेष रूप से उसे संदर्भित मामलों पर निर्णय लेना है और संदर्भ के दायरे से बाहर के मुद्दों पर निर्णय लेने का अधिकार उसके पास नहीं है। उसे अपने निर्णय को निर्देश-निबंधन तक ही सीमित रखना चाहिए और उसे संदर्भित विवाद के दायरे का विस्तार या परिवर्तन नहीं करना चाहिए।

55. इस न्यायालय ने यह टिप्पणी की है कि विद्वान अधिकरण ने स्वयं माना है कि अधिकरण ने निर्देश-निबंधन का उल्लंघन किया है जिसके अनुसार विद्वान अधिकरण को प्रत्यर्थी कर्मकारों के नियमितीकरण के मुद्दे पर निर्णय लेना था जबकि विद्वान अधिकरण ने कर्मकारों को छंटनी प्रतिकर देकर उनके पक्ष में एक अधिनिर्णय पारित किया था। तत्काल याचिका में विद्वान अधिकरण ने गलत तरीके से निर्देश-निबंधन का उल्लंघन किया है और प्रत्यर्थी कर्मकारों की सेवाओं को नियमित किया है।

56. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत इस न्यायालय की शक्ति के सीमित दायरे को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय का सुविचारित मत है कि

आक्षेपित अधिनिर्णय पेटेंट अवैधता से ग्रस्त है क्योंकि विद्वान अधिकरण निर्देश निबंधन के दायरे से परे चला गया है और यह अभिलेख को देखने से ही स्पष्ट त्रुटि है जो श्रम कानूनों के न्यायशास्त्र के संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय के साथ-साथ इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून का उल्लंघन है।

57. उपर्युक्त टिप्पणियों के मद्देनजर, केंद्र सरकार श्रम न्यायालय सह औद्योगिक अधिकरण-II द्वारा औद्योगिक विवाद संख्या 56/2003 में पारित दिनांक 18 अक्टूबर 2006 के आक्षेपित अधिनिर्णय को अपास्त किया जाता है।

58. तदनुसार, याचिका के इस समूह में दिए गए आक्षेपित अधिनिर्णयों को अपास्त किया जाता है तथा याचिका के तत्काल समूह को लंबित आवेदनों, यदि कोई हों, के साथ अनुमति दी जाती है।

59. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, याचिका के तत्काल समूह का निपटान किया जाता है।

60. निर्णय को तत्काल वेबसाइट पर अपलोड किया जाएगा।

(चन्द्र धारी सिंह)
न्यायाधीश

3 जुलाई 2024
डीवाई/डीबी/एवी

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*